International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 1788-1789

मेवाड़ में ब्रिटिश शासन एवं सामाजिक सुधार

निखिल कुमार
शोध छात्र, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत।

प्रस्तावना

1818 ई. में ईस्ट इण्डिया कम्पनी और मेवाड़ के मध्य संधि के पश्चात् तत्कालीन कम्पनी के एजेण्ट ने राज्य की अर्थव्यवस्था को सजीव करने को ठेका व्यवस्था को प्रोत्साहित किया था। इसमें हीजारा प्रणाली की प्रमुखता रही थी। हीजारे प्रदान की गई भूमि पर राजस्व का निर्धारण हिस्सों अथवा नकद कूंत द्वारा किया जाता था।[1] इस कूंत करने में कृषक, हीजारेदार तथा राज्य कर्मचारी सम्मिलित होते थे। राणा के प्रत्यक्ष नियंत्रण वाले भूमि क्षेत्र पर यह कूंत पटेल, पटवारी, सेना तथा कृषक द्वारा सम्पन्न होती थी। कूंते में बराबरी के तीन भाग में यदि भूमि हीजारे पर होती तो तीन भाग तथा राणा के नियंत्रण वाली भूमि पर दो भाग किये जाते थे। हीजारा भूमि पर प्रथम भाग शासन का, द्वितीय भाग हीजारेदार तथा तृतीय भाग किसान का और राणा नियंत्रित भूमि पर प्रथम भाग शासन तथा द्वितीय भाग कृषक का रहता था।[2] कृषक के हिस्से में ग्राम के राज्य तथा समाज सेवकों के हिस्से एवं यजमानी नेग दिये जाते थे जो कि कृषक अंश के 1/2 भाग होते थे। प्रत्यक्ष नियंत्रित राणाधीन भूमि के राजस्व को हासिल–भोग कहा जाता था। इस काल में जागीरदारों द्वारा भी जागीर क्षेत्र में कृषकों से बांटा या भाग के स्थान पर भू–राजस्व कृषि आय का 1/3 हिस्सा भोग हासिल तथा कई प्रकार की लागतें ली जाती थीं।[3]

कूंता प्रणाली में राजस्व लेने वाली धृतियों (अधिकारी) को अधिक लाभ रहता था, क्योंकि कूंता खड़ी फसल पर किया जाता था, फसल के अच्छे और बुरे भविष्य का राजस्व पर प्रभाव नहीं पड़ता था। बांटा अथवा भाग प्रणाली में फसल की लाभ–हानि को किसान के साथ–साथ शासन अथवा हीजारेदार को भुगतना पड़ता था। यद्यपि टॉड ने लिखा है कि फसल का राजस्व कूंते द्वारा नहीं देने वाले कृषक अपनी भूमि का राजस्व बांटा/भाग में अदा करने के लिये राणा को प्रार्थना–पत्र दे सकते थे।[4] किन्तु ऐसी अभिक्रिया का साधारणीकरण नहीं हो सकता था क्योंकि यह लाभ राजस्व निर्धारण करने वाले अधिकारियों तथा कर्मचारियों के कृपा–पात्र किसान ही प्राप्त कर सकते थे,[5] अन्यथा साधारण कृषक की पहुंच राणा की निजी अनुचरों तक भी नहीं हो पाती थी।

कूंता निर्धारकों द्वारा कूंता निर्धारण करने में फसल के राजस्व को कम अथवा ज्यादा कूंतने की गुंजाइश रहती थी। तत्काल प्रचलित विभिन्न लागतों में कर्मचारियों द्वारा ली जाने वाली लागों से स्पष्ट होता है कि वे अपना निजी लाभांश प्राप्त कर कूंते में किसानों को कई प्रकार की छूट प्रदान कर देते थे, जिनमें भू–राजस्व प्रमुख होता था। ऐसी लागों में डोरी नजराना, खाता–कसर, डोरी–पूजन, कूंता–नजराना, रसद आदि मुख्य रहे थे।[6]

राजस्व अधिकारी और कर्मचारियों की इन भ्रष्टाचारी कार्यवाहियों से ऐसा विदित होता है कि राणा भी अवश्य अवगत रहता था। पकड़े जाने पर दण्ड की प्रक्रियाओं में उल्लेखित आर्थिक दण्ड भी दिये जाते थे, किन्तु सुदृढ़ प्रशासनिक व्यवस्था के अभाव में भ्रष्टाचारी कार्यों को पकड़ लेना दुष्कर कार्य था। अतः राज्य द्वारा भ्रष्टाचार की स्थिति को स्वीकारते हुए राजस्व अधिकारियों व कर्मचारियों से भी उनकी आय पर 'लाग' ली जाती थी, यथा–टक्की लागत, टांका–बराड़, पटेल या चौधरी बराड़, कामदार नजराना, पटेल नजराना, उपरकराई आदि मुख्य रहे थे।[7]

1862 ई. में लाटा–कूंता के राजस्व निर्धारण को बंद कर तत्कालीन राज्य–प्रधान कोठारी केशरसिंह ने 1852 ई. से 1862 ई. तक की औसत उपज के हिसाब से नकद राजस्व लेने की योजना प्रारम्भ की थी।[8] यह योजना किसानों के लिये लाभदायक थी किन्तु राजस्व अधिकारियों, कर्मचारियों तथा बिचौलियों (हीजारेदारों) के भ्रष्टाचारों पर आघात करती थी, अतः उनके द्वारा इस योजना का समर्थन नहीं किया गया। अन्ततः यह मात्र कागजी योजना बनकर रह गई।[9] इस काल से राजस्व प्रशासन में प्रशासनिक परिवर्तन कर वंशानुगत पटेल तथा बलाई के साथ पर पटवारी तथा चपरासी की वैतनिक नियुक्तियां की जाने लगी थीं। राजस्व का हिसाब–किताब रखने और किसानों को लगान जमा कराने की दौड़–धूप से बचाने के लिए, दो–तीन गांवों के पटवार क्षेत्र बनाकर पटवार–खाने खोले गए। इस परिवर्तन द्वारा किसान व्यर्थ की दौड़, राजस्व जमा कराने, कूंत कराने के लिए अधिकारियों के पीछे पड़े रहने तथा अनुनय–विनय से बच गया। यह काल मेवाड़ राज्य के प्रशासन में दफ्तरीय–पद्धति प्रारम्भ होने का काल था।[10] 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के तीन दशक से चकबन्दी–व्यवस्था द्वारा कूंता किया जाने लगा था अतः भूमि की उपज के अनुसार भूमि का वर्गीकरण किया गया। इसमें भूमि को गांव के परकोटों में कृषिकारी भूमि 'आधण', गांव के पास वाली भूमि 'गोरमा', पड़त तथा गांव से दूर को रांकड़–कांकड़, पहाड़ी या पथरीली भूमि 'मगरा', वर्षा पर निर्भर भूमि को माल और पुनः इनको पीबल चाही–एक साखी या दो साखी, पड़त एक साखी, घास की भूमि को बीड़, मगरा–माल,माल–बेजाहार आदि पर अलग–अलग कूंते निश्चित कर अलग–अलग भूमि पर उसके प्रकार, कृषि–उत्पादन पर हासिल–भोग लिया जाने लगा था।[11] इस व्यवस्था के अनुसार श्रेष्ठ भूमि माल तथा पीवल पर 5 रुपया प्रति बीघा, मैदानी एक साखी तथा दो साखी पर 3 रुपया प्रति बीघा और मगरा या पड़त पर 1 रुपया प्रति बीघा लिया जाता था। व्यापारिक एवं बाड़ी के उत्पादन पर ब्राह्मण एवं चारणों को छोड़कर राजपूतों से 3 रुपया से 5 रुपया प्रति बीघा और कृषिकारी जातियों से अफीम व गन्ने की फसल पर 7 रुपया प्रति बीघा, तम्बाकू पर 5 रु. प्रति बीघा, कपास पर 4 रु. प्रति बीघा, भूमि पर 'बीघोड़ी' लिया जाने लगा था।[12] खड़लाखड़ (लकड़ी), कूड़–नीवाण (कुए), हलोटी–सिंगोटी (हल तथा बैल) तथा बीड़ की लागत पूर्व परम्परा के अनुसार राजस्व में प्राप्त की जाती रही थी। किन्तु नकद परम्परा के प्रारम्भ होने से इनका भुगतान जिन्सों में अथवा नकद मूल्यांकन के आधार पर खड़–लाखड़ प्रति बीघा 1 रुपया, कूड़–नीवाण पर 8 आना प्रति ढाणा तथा बीड़ पर 4 आना से 8

आना प्रति बीघा लिया जाता था।[13]

संदर्भ

1. ब.रि. पट्टा बही वि.सं. 1905 के अनुसार तत्कालीन यह कूंता 3 रुपया प्रति बीघा किया गया था, बस्ता 2
2. ब.रि. पट्टा बही वि.सं. 1905 के अनुसार तत्कालीन यह कूंता 3 रुपया प्रति बीघा किया गया था, बस्ता 2
3. ब.रि. पट्टा बही वि.सं. 1905 के अनुसार तत्कालीन यह कूंता 3 रुपया प्रति बीघा किया गया था, बस्ता 2
4. मेहता संग्राम सिंह कलेक्शन–फाईल 14 बस्ता 1, एनाल्स भा. 1 पृ. 582–583, यटे–मेवाड़ पृ. 64, अकाल के समय यह भोग, बांटा या भाग में लिया जाता था जो उत्पादन का 1 प्रतिशत हुआ करता था–मेवाड़ रेजीडेन्सी, पृ. 72
5. वी.वि. पृ. 1939
6. फहरिस्त लाग–बाग फाईल 31/ए, (रा.रा.अ.बी.), सरक्यूलर रजिस्टर स्टेट महकमा खास भा. 1 पृ. 250
7. व.रि. जमा वही वि.सं. 1919 बस्ता 2, बीजोलियां सत्याग्रह का इतिहास (अप्र.ह.प्र.) पृ. 5, उ.ई.भा. 2 पृ. 735, शोध पत्रिका–उपरोक्त पृ. 75–80
8. राणा शम्भु सिंह के शासनकाल में हांसिल–भोग का राजस्व बीघोड़ी पर नकद लिया जाना प्रारम्भ किया था। यह व्यवस्था 1868–76 ई. तक कुछ क्षेत्र–जहाजपुर, मांडल, कपासन, राशमीं आदि में प्रचलित की गई थी किन्तु विस्तृत रूप में परम्परावादी जनजीवन द्वारा अंगीकार नहीं करने के फलतः प्राचीन परम्परा को बनी रहने दिया गया था–कोठारी कलेक्शन–कागज लाटा–कूंता, बीघोड़ी, बाबत (रा.रा.अ.उ.) वी. वि. पृ. 2089, कोठारी पृ. 28, उ.ई.भा. 2, पृ. 804
9. यटे–मेवाड़ पृ. 49–51
10. उपरोक्त।
11. ब.रि. बही खाता चकबन्दी वि.सं. 1931, जमा बहियाँ वि.सं. 1932–1940, पट्टा बहियाँ वि.सं. 1951, 1954–58 बस्ता 5, 6, 16, मेहता संग्राम सिंह कलेक्शन फाईल 156–180 बस्ता 12
12. टॉड कालीन (1818 ई. से 1822 ई.) मेवाड़ में व्यापारिक फसलों पर प्रति 100 रुपया उपज पर 2 रुपया से 6 रुपया तक राजस्व में बीघोड़ी लिया जाता था (एनाल्स भा. 1 पृ. 582) किन्तु इसके पश्चात् अलग–अलग फसलों के अनुसार बीघोड़ी लिया जाने लगा था–वी.वि. पृ. 150
13. ब.रि. उपरोक्त जमा बहियां, एनाल्स, भा. 3, पृ. 1628